जनार्दन कुमार

बनाम

चंदन प्रताप सिंह एवं अन्य

2020 का सिविल विविध संख्या 214

03 दिसंबर, 2024

(माननीय न्यायमूर्ति श्री अरूण कुमार झा)

विचार के लिए मुद्दा

क्या भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धाराओं 63 और 65 के तहत उचित आधारिक साक्ष्य के अभाव में, तक़्सीमनामा की प्रमाणित प्रति की फोटोकॉपी को प्रदर्श के रूप में अंकित न करने का आदेश विधिसम्मत है?

हेडनोट्स

- याचिकाकर्ता द्वारा प्रदर्श के रूप में चिह्नित किए जाने हेतु प्रस्तुत दस्तावेज़ साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 की किसी भी उपधारा के अंतर्गत नहीं आता है। यदि याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया दस्तावेज़, जिसे द्वितीयक साक्ष्य के रूप में स्वीकार करवाने का प्रयास किया जा रहा है, धारा 65 में विनिर्दिष्ट किसी भी शर्त को पूर्ण नहीं करता है, तो उसे प्रदर्श के रूप में चिह्नित नहीं किया जा सकता। याचिकाकर्ता यह स्थापित करने में विफल रहा है कि उसने यथासंभव प्रयास के बावजूद उस मूल दस्तावेज़ को प्रस्तुत नहीं कर पाया, जिसकी छायाप्रति प्रस्तुत की गई है। इसके अतिरिक्त, प्रस्तुत दस्तावेज़ प्रमाणित प्रति की छायाप्रति मात्र है और याचिकाकर्ता ने रिकॉर्ड पर एक भी कागज़ी प्रमाण प्रस्तुत नहीं किया है जिससे यह प्रदर्शित हो सके कि उसने समुचित प्रयास के बावजूद मूल प्रमाणित प्रति को पंजीयन कार्यालय से प्राप्त नहीं कर पाया और इस प्रकार, यह दिखाने में असफल रहा है कि वह उस मूल दस्तावेज़ को प्रस्तुत करने में असमर्थ है, जिसकी छायाप्रति बनाई गई है। (पैरा 10)
- याचिका खारिज की जाती है। (पैरा 12)

न्याय दृष्टान्त

राकेश मोहिंद्रा बनाम अनीता बेरी, (2016) 16 SCC 483; गंगा सागर गोंड एवं अन्य बनाम गणेश गोंड एवं अन्य, (2002) 2 PLJR 772

अधिनियमों की सूची

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (धारा 63, 64, 65); भारत का संविधान (अनुच्छेद 227)

मुख्य शब्दों की सूची

गौण साक्ष्य; तक़्सीमनामा; प्रमाणित प्रति; दस्तावेज की ग्राह्यता; धारा 65 साक्ष्य अधिनियम; प्रदर्श अंकन; अनुच्छेद 227

प्रकरण से उत्पन्न

दिनांक 26.06.2019 को पारित आदेश, शीर्षक वाद सं. 03/2016, मुंसिफ प्रथम, छपरा।

पक्षकारों की ओर से उपस्थिति

अपीलकर्ता/ओं के लिए: श्री अरुण कुमार, अधिवक्ता

प्रतिवादी/ओं के लिए: श्री अनिल कुमार तिवारी, अधिवक्ता

रिपोर्टर द्वारा हेडनोट बनाया गया: अमित कुमार मल्लिक, **अधिवक्ता**

माननीय पटना उच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2020 का सिविल विविध संख्या 214

==

जनार्दन कुमार, पिता- स्वर्गीय लालदेव कुवर, निवासी-गाँव और डाकघर- कोल्हुआ, थाना- बनियापुर, जिला-सारण, छपरा ।

.... याचिकाकर्ता/गण

बनाम

1. चंदन प्रताप सिंह, पिता- श्री बटेश्वर नाथ सिंह, निवासी-गाँव-पिपरा, डाकघर-महमूदपुर, थाना- सिसवन, जिला-सिवान ।
2. शैलेंद्र कुमार ओझा, पिता- श्री कन्हैया प्रसाद ओझा, निवासी-गाँव और डाकघर-कोल्हुआ, थाना- बनियापुर, जिला-सारण, छपरा ।
3. पूर्णेंदु ओझा, पिता- स्वर्गीय राम बिलास ओझा, निवासी- गाँव और डाकघर-कोल्हुआ, थाना- बनियापुर, जिला-सारण, छपरा, वर्तमान में मकान संख्या बी-2, पत्रकार नगर, कंकड़बाग, पटना, थाना-पत्रकार नगर, जिला-पटना ।

.... उत्तरदाता/गण

==

उपस्थितिः

याचिकाकर्ता/गण के लिएः श्री अरुण कुमार, अधिवक्ता

उत्तरदाता/गण के लिएः श्री अनिल कुमार तिवारी, अधिवक्ता

==

न्यायपीठ : माननीय न्यायमूर्ति श्री अरुण कुमार झा

आरक्षित निर्णय

दिनांक : 03-12-2024

वर्तमान याचिका भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत दायर की गई है, जिसमें विद्वान मुन्सिफ, प्रथम, छपरा द्वारा स्वामित्व वाद संख्या 03/2016 में पारित दिनांक 26.06.2019 के आदेश को चुनौती दी गई है, जिसके द्वारा और जिसके तहत वादी/याचिकाकर्ता द्वारा दाखिल की गई 03.06.2019 की याचिका को खारिज कर दिया गया है, जिसमें वादी द्वारा 29.09.1984 के *तकसीमनामा* (बंटवारा ज्ञापन) की प्रमाणित सच्ची प्रति की छायाप्रति, जिसे इसके

मूल दिनांक 12.03.1974 की सच्ची प्रति बताया गया है, को प्रदर्श के रूप में अंकित किए जाने का निवेदन किया गया था।

2. संक्षेप में, मामले के तथ्य यह हैं कि वादी/याचिकाकर्ता ने स्वामित्व वाद सं. 03/2016 दायर किया, जिसमें दिनांक 01.12.2009 को प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में किए गए *बैनामा* विलेख को शून्य और दिखावटी दस्तावेज घोषित करने की प्रार्थना की गई है, साथ ही वादी के स्वामित्व की घोषणा एवं वादग्रस्त भूमि पर उसके कब्जे की पुष्टि किए जाने की भी मांग की गई है। वादी/याचिकाकर्ता का दावा है कि उन्होंने प्रतिवादी संख्या 3 से दिनांक 26.09.2015 के पंजीकृत बिक्री विलेख के माध्यम से वादग्रस्त भूमि को खरीदा और उस भूमि पर कब्जा प्राप्त किया। उन्होंने वादग्रस्त भूमि पर कुछ निर्माण कार्य भी किया है। हालांकि, प्रतिवादी संख्या 1 ने याचिकाकर्ता के किरायेदारों को धमकी दी कि उन्हें किराया प्रतिवादी संख्या 1 को देना होगा, क्योंकि उसके पास दिनांक 01.12.2009 का प्रतिवादी संख्या 2 से प्राप्त पंजीकृत *बैनामा* विलेख है और उसी के आधार पर वह वाद भूमि पर अपना अधिकार होने का दावा करता है। वादी/याचिकाकर्ता ने इस मामले में जांच-पड़ताल की और यह आधार लेकर वाद दायर किया कि वादग्रस्त भूमि प्रतिवादी संख्या 3 के कब्जे में दिनांक 11.03.1974 के *तकसीमनामा* विलेख के आधार पर आई, जो कि प्रतिवादी संख्या 3 के पिता के सह-भागीदारों के बीच बंटवारे का पंजीकृत दस्तावेज (स्मरण-पत्र) है। इसके अतिरिक्त, वादग्रस्त भूमि का एक हिस्सा प्रतिवादी संख्या 3 ने तिलक मांझी नामक व्यक्ति से पंजीकृत *बैनामा* विलेख के माध्यम से भी प्राप्त किया था। इस प्रकार, वादी/याचिकाकर्ता का दावा है कि प्रतिवादी संख्या 2 को प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में कोई *बैनामा* विलेख निष्पादित करने का कोई अधिकार नहीं था। प्रतिवादियों/प्रत्यर्थियों को नोटिस जारी किए गए थे, लेकिन वे मुकदमे में उपस्थित

नहीं हुए और इस तरह, मुकदमा प्रतिवादियों के खिलाफ *एकतरफा* रूप से अग्रसर हुआ। वादी/याचिकाकर्ता ने अपनी ओर से आठ गवाहों का परीक्षण कराया। चूंकि दिनांक 12.03.1974 की मूल *तकसीमनामा* की प्रति प्रतिवादी संख्या 3 द्वारा गुम हो गई थी, लेकिन उक्त *तकसीमनामा* की दिनांक 29.09.1984 की प्रमाणित सच्ची प्रति की छायाप्रति प्रतिवादी संख्या 3 द्वारा याचिकाकर्ता को वादग्रस्त भूमि पर अपने दावे के समर्थन में उपलब्ध कराई गई थी, अतः वादी/याचिकाकर्ता ने दिनांक 03.06.2019 को एक प्रार्थना पत्र दायर कर उक्त छायाप्रति को प्रदर्श के रूप में अंकित किए जाने का निवेदन किया। हालांकि, विद्वान विचारण न्यायालय ने दिनांक 26.06.2019 के आदेश के माध्यम से उपरोक्त याचिका को खारिज कर दिया और उक्त आदेश को इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई है।

3. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने तर्क प्रस्तुत किया कि प्रश्नगत आदेश को विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 63 (2) (इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित) के तहत द्वितीयक साक्ष्य के प्रावधानों की पूरी तरह से अनदेखी करते हुए पारित किया गया है और इसलिए, प्रश्नगत आदेश टिकाऊ नहीं है। विद्वान विचारण न्यायालय ने इस तथ्य की भी अनदेखी की कि याचिकाकर्ता ने उक्त दस्तावेज़ को साबित करने के लिए पहले ही दो गवाहों से पूछताछ की है क्योंकि उन्होंने कहा कि उक्त दस्तावेज़ की फोटोकॉपी उनकी उपस्थिति में बनाई गई थी जो यांत्रिक प्रक्रियाओं द्वारा मूल से बनाई गई प्रतियों के रूप में द्वितीयक साक्ष्य लेने के लिए अधिनियम की धारा 63 (2) की आवश्यकता को पूरा करता है जो स्वयं में प्रतिलिपि की सटीकता सुनिश्चित करते हैं तथा ऐसी प्रतिलिपियों से मिलान की गई प्रतिलिपियाँ भी द्वितीयक साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य होती हैं। विद्वान विचारण न्यायालय ने इस तथ्य पर भी विचार नहीं किया है कि याचिकाकर्ता के विक्रेता ने विशेष रूप से शपथ पर यह कहा है कि *तकसीमनामा*

का मूल विलेख खो गया है, लेकिन उसने याचिकाकर्ता को अपने दावे के समर्थन में तारीख 29.09.1984 की *तकसीमनामा* की सही सत्यापित प्रति की एक फोटोकॉपी सौंप दी थी और इस तरह के दस्तावेज़ को द्वितीय साक्ष्य के रूप में अधिनियम के तहत प्रदर्श के रूप मे अंकित करने की अनुमति है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि विद्वान विचारण न्यायालय ने याचिकाकर्ता द्वारा इस विषय पर प्रस्तुत मौखिक साक्ष्यों की उपेक्षा करते हुए यह निष्कर्ष निकालने में अधिकारिता संबंधी त्रुटि की कि उक्त दस्तावेज़ को प्रदर्श के रूप में अंकित किया जाना स्वीकार्य नहीं है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि उक्त दस्तावेज़ वास्तविक है या नहीं, इस पर मुकदमे के अंतिम निपटारे के समय गौर किया जाएगा और दस्तावेज़ को प्रदर्श के रूप में चिह्नित करने का मतलब यह नहीं है कि दस्तावेज़ को वास्तविक दस्तावेज़ के रूप में माना जाना चाहिए और वास्तविकता और प्रासंगिकता पर उचित स्तर पर विचार किया जाएगा। विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि इसी तरह की स्थिति में, इस न्यायालय के विद्वान एकल पीठ द्वारा ***गंगा सागर गोंड और अन्य बनाम गणेश गोंड और अन्य (2002) 2 पी.एल.जे.आर. 772*** में रिपोर्ट मामले में इस न्यायालय ने की वर्ष 1890 के मूल बिक्री विलेख की फोटोकॉपी, दस्तावेज़ को अनुमति दी अभिलेख पर रखी जाएगी, बशर्ते कि दस्तावेज़ को प्रामाणिक मानने के लिए अन्य आवश्यक औपचारिकताएं पूर्ण की जाएं। इस प्रकार, विद्वान अधिवक्ता ने यह प्रस्तुत किया कि उपरोक्त तथ्यों और परिस्थितियों के आलोक में, प्रश्नगत आदेश विधिसंगत रूप से टिक नहीं सकता, और इस कारण से उक्त आदेश को रद्द करने की आवश्यकता है।

4. दूसरी ओर, प्रतिवादी संख्या 1 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने दृढ़ता से तर्क प्रस्तुत किया कि वर्तमान याचिका में कोई योग्यता नहीं है क्योंकि प्रश्नगत आदेश में कोई कमी नहीं है और इसलिए, प्रश्नगत आदेश की यथावत

पुष्टि करने की आवश्यकता है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क प्रस्तुत किया कि वादी/याचिकाकर्ता की ओर से प्रदर्श के रूप में चिह्नित किए जाने वाले दस्तावेज़ को मूल *तकसीमनामा* की अभिप्रमाणित प्रति की फोटोकॉपी कहा गया है। लेकिन वादी/याचिकाकर्ता ने कहीं भी यह नहीं कहा है कि मूल *तकसीमनामा* खो गया है क्योंकि वादी की ओर से केवल यह दावा किया गया है कि वादी के विक्रेता ने उसे बताया है कि उसने मूल *तकसीमनामा* दिनांक 12.03.1974 को खो दिया है। इसके बाद, जिस फोटोकॉपी को प्रदर्श के रूप में चिन्हित करने की मांग की जा रही है, वह पंजीकृत *तकसीमनामा* की अभिप्रमाणित प्रति की फोटोकॉपी है। लेकिन फिर से वादी/याचिकाकर्ता ने कहीं भी यह नहीं कहा है कि मूल पंजीकृत दस्तावेज की अभिप्रमाणित प्रति रजिस्ट्री कार्यालय में उपलब्ध नहीं थी। जब तक अभिप्रमाणित प्रति उपलब्ध नहीं है, तब तक फोटोकॉपी को प्रदर्श के रूप में चिह्नित करने के लिए विचार में नहीं लिया जा सकता है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि जब दस्तावेज़ के प्रदर्श के रूप में चिह्नित करने के लिए और ऐसे दस्तावेज़ की ग्राह्यता के संबंध में अधिनियम के तहत विशिष्ट प्रावधान है, तो प्रावधानों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है और अग्राह्य दस्तावेज़ को अभिलेख पर नहीं लिया जा सकता है। प्रतिवादी संख्या 1 के विद्वान अधिवक्ता ने उनके तर्क के समर्थन में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले ***राकेश मोहिंद्र बनाम अनीता बेरी और अन्य (2016) 16 एससीसी 483*** में रिपोर्ट के मामले पर भरोसा किया।

5. मैंने विपरीत पक्षों की दलीलों पर गंभीरतापूर्वक विचार किया और अभिलेख का अवलोकन किया।

6. स्वीकार्य रूप से, जिसे प्रदर्श के रूप में अंकित किए जाने का प्रयास किया गया है, वह दिनांक 12.03.1974 के मूल *तकसीमनामा* की प्रति नहीं है। प्रस्तुत

की गई छायाप्रति वास्तव में दिनांक 29.09.1984 के मूल *तकसीमनामा* की अभिप्रमाणित/सत्यापित प्रति की प्रति बताई गई है।

7. एक सामान्य नियम के रूप में, दस्तावेजों को प्राथमिक साक्ष्य द्वारा साबित किया जाता है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 64 में प्रावधान है कि दस्तावेजों को प्राथमिक साक्ष्य द्वारा साबित किया जाना चाहिए, सिवाय उन मामलों के जो धारा 65 में उल्लिखित हैं। जब प्राथमिक साक्ष्य उपलब्ध नहीं होता, तब दस्तावेजों को अधिनियम की धारा 63 के अंतर्गत वर्णित द्वितीयक साक्ष्य के माध्यम से सिद्ध किया जा सकता है, जो निम्नानुसार हैः-

*"63. **द्वितीयक साक्ष्य**- द्वितीयक साक्ष्य का अर्थ है और इसमें शामिल हैं-*

(1) इसके बाद निहित प्रावधानों के तहत दी गई प्रमाणित प्रतियां;

(2) मूल प्रति से यांत्रिक प्रक्रियाओं द्वारा बनाई गई प्रतियां जो स्वयं में प्रतिलिपि की सटीकता को सुनिश्चित करती हैं, और ऐसी प्रतियों की तुलना की गयी प्रतिलिपियाँ;

(3) मूल से बनाई गई या उससे तुलना की गई प्रतियाँ;

(4) उन पक्षकारों के खिलाफ, जिन्होंने उन्हें निष्पादित नहीं किया है दस्तावेजों के प्रतिलेख;

(5) किसी व्यक्ति द्वारा दिए गए दस्तावेज़ की सामग्री का मौखिक विवरण जिसने खुद इसे देखा है।

दृष्टांत

(क) किसी मूल की छायाप्रति, यधपि दोनों की तुलना नहीं की गई है, तथापि यह साबित किया जाता है कि जो छायाप्रती ली गई थी वह मूल थी, उसकी सामग्री का द्वितीयक साक्ष्य है।

(ख) प्रतिलिपि बनाने वाली मशीन द्वारा बनाए गए पत्र की प्रति की तुलना में एक प्रति पत्र की सामग्री का द्वितीयक साक्ष्य है, यदि यह दिखाया जाता है कि प्रतिलिपि बनाने वाली मशीन द्वारा बनाई गई प्रति मूल से बनाई गई थी।

(ग) प्रति से नकल कर के तैयार की गयी, लेकिन बाद में मूल से तुलना की गयी प्रतिलिपि, द्वितीयक साक्ष्य है; लेकिन इस तरह की तुलना नहीं की गई प्रतिलिपि मूल का द्वितीयक साक्ष्य नहीं है, यधपि जिस प्रति से इसे नकल कर के तैयार किया गया था, उसकी तुलना मूल से की गई थी।

(घ) न तो मूल की तुलनाकृत प्रति का मौखिक विवरण, न ही किसी छायाप्रती या यंत्रकृत प्रति का मौखिक विवरण, मूल का द्वितीयक साक्ष्य है।"

8. अब, अधिनियम की धारा 65 उन परिस्थितियों से संबंधित है जिनके तहत दस्तावेजों के अस्तित्व, स्थिति या सामग्री को साबित करने के लिए दस्तावेजों से संबंधित द्वितीयक साक्ष्य दिया जा सकता है। बेहतर मूल्यांकन हेतु, अधिनियम की धारा 65 को नीचे उद्धृत किया गया हैः

"65. जिन मामलों में दस्तावेजों से संबंधित द्वितीयक साक्ष्य दिए जा सकते हैं — *निम्नलिखित मामलों में*

किसी दस्तावेज़ के अस्तित्व, स्थिति या सामग्री का द्वितीयक साक्ष्य दिया जा सकता है –

(क) जब यह दर्शित किया जाता है या प्रतीत होता है की मूल ऐसे व्यक्ति के कब्जे में या शक्तियाधीन है -

जिसके खिलाफ दस्तावेज़ को साबित करने की मांग की गई है, या

जो न्यायालय की आदेशिका की पहुंच से बाहर या उसके ऐसी आदेशिका के अध्यधीन नहीं है, या

जो उसे पेश करणे के लिए कानूनी रूप से बाध्य है,

और जब की, धारा 66 में उल्लिखित सूचना के बाद, ऐसा व्यक्ति इसे पेश नहीं करता है;

(ख) जब मूल दस्तावेज़ का अस्तित्व, स्थिति या सामग्री उस व्यक्ति या उसके हित प्रतिनिधि द्वारा, जिसके विरुद्ध यह सिद्ध किया जा रहा है, लिखित रूप में स्वीकार कर ली गई हो;

(ग) जब मूल दस्तावेज़ नष्ट हो गया हो या खो गया हो, या जब वह पक्ष जो उसकी विषयवस्तु का साक्ष्य प्रस्तुत कर रहा है, किसी अन्य कारणवश जो उसकी अपनी चूक या लापरवाही से उत्पन्न न हुआ हो उसे उचित समय में प्रस्तुत नहीं कर सकता हो;

(घ) जब मूल ऐसी प्रकृति का हो कि आसानी से स्थानांतरित होने योग्य न हो;

(ङ) जब मूल धारा 74 के अर्थ के अंतर्गत लोक दस्तावेज है;

(च) जब मूल एक ऐसा दस्तावेज है जिसकी प्रमाणित प्रति इस अधिनियम द्वारा या भारत में लागू किसी अन्य विधि द्वारा साक्ष्य के रूप में ग्राह्य है;

(छ) जब मूल में कई लेखा खाते या अन्य दस्तावेज होते हैं जिनकी अदालत में आसानी से जांच नहीं की जा सकती है और साबित किया जाने वाला तथ्य पूरे संग्रह का सामान्य परिणाम है।

अवस्थाओं (क), (ग) और (घ) में दस्तावेज़ की सामग्री का कोई भी द्वितीयक साक्ष्य स्वीकार्य है।

अवस्था (ख) में, लिखित स्वीकृति स्वीकार्य है।

अवस्थाओं (ङ) या (च) के मामले में, दस्तावेज़ की एक प्रमाणित प्रति स्वीकार्य है, लेकिन कोई अन्य किसी भी प्रकार का द्वितीयक साक्ष्य स्वीकार्य नहीं है।

अवस्था मामले (छ) में, किसी भी द्वारा दस्तावेजों के सामान्य परिणाम के रूप में साक्ष्य दिया जा सकता है। उस व्यक्ति द्वारा जिसने उनकी जाँच की है, और जो ऐसे दस्तावेजों की जाँच में कुशल है।"

9. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने ***राकेश मोहिंद्रा (उपरोक्त)*** के मामले में पैराग्राफ 15, 20 और 21 में निम्नानुसार निर्णय दिया हैः

*"**15.** द्वितीयक साक्ष्य प्रस्तुत करने की पूर्व-शर्तें यह हैं कि जिस पक्ष द्वारा ऐसे दस्तावेज़ों पर भरोसा किया जा रहा है, वह यथासंभव प्रयासों के बावजूद मूल दस्तावेज़ प्रस्तुत करने में असमर्थ हो और वह दस्तावेज़ उसके नियंत्रण से बाहर हो। जो पक्ष द्वितीयक साक्ष्य प्रस्तुत करना चाहता है, उसे यह सिद्ध करना होगा कि प्राथमिक साक्ष्य प्रस्तुत क्यों नहीं किया जा सका। जब तक यह स्थापित नहीं किया जाता कि मूल दस्तावेज़ खो गया है, नष्ट हो गया है, या जानबूझकर उस पक्ष द्वारा रोका जा रहा है, जो उस दस्तावेज़ का उपयोग करना चाहता है, तब तक उस दस्तावेज़ के संबंध में द्वितीयक साक्ष्य को स्वीकार नहीं किया जा सकता।*

***20.** यह सुव्यवस्थित विधिक सिद्धांत है कि यदि कोई पक्ष द्वितीयक साक्ष्य प्रस्तुत करना चाहता है, तो न्यायालय के लिए यह आवश्यक है कि वह प्रस्तुत किए गए दस्तावेज़ या उसकी सामग्री की प्रमाणिकता की जांच करे और यह निर्णय ले कि वह दस्तावेज़ द्वितीयक साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य है या नहीं। साथ ही, उस पक्ष को यह तथ्यात्मक आधार प्रस्तुत करना होता है जिससे यह सिद्ध हो कि वह मूल दस्तावेज़ प्रस्तुत करने में असमर्थ है और इसलिए उसे द्वितीयक साक्ष्य देने का अधिकार प्राप्त है। यह भी समान रूप से स्थापित सिद्धांत है कि न तो किसी दस्तावेज़ का मात्र साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य कर लेना ही उसके प्रमाणित होने के बराबर होता है, और न ही किसी दस्तावेज़ को महज प्रदर्श बना देने से उस*

दस्तावेज़ के प्रमाण की आवश्यकता समाप्त हो जाती है, जिसे विधि के अनुसार प्रमाणित किया जाना आवश्यक होता है।

21. *इस न्यायालय ने एम. चंद्र बनाम एम. थंगमुथु [एम. चंद्र बनाम एम. थंगमुथु, (2010) 9 एससीसी 712: (2010) 3 एस. सी. सी. (सी. आई. वी.) 907], के मामले में साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 की आवश्यकता पर विचार किया और निम्नलिखित निर्णय दिया (एससीसी पृष्ठ 735-36, अनुच्छेद 47)*

"47. हम उच्च न्यायालय के तर्क से सहमत नहीं हैं। यह सत्य है कि वह पक्ष जो किसी दस्तावेज़ की सामग्री पर भरोसा करना चाहता है, उसे सामग्री का प्राथमिक साक्ष्य प्रस्तुत करना चाहिए, और केवल अपवादस्वरूप मामलों में ही द्वितीयक साक्ष्य स्वीकार्य होता है। तथापि, यदि द्वितीयक साक्ष्य स्वीकार्य है, तो उसे किसी भी उपलब्ध रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है चाहे वह प्रति, प्रति की प्रति, सामग्री का मौखिक साक्ष्य अथवा किसी अन्य रूप में हो। द्वितीयक साक्ष्य को ऐसे मूल साक्ष्य द्वारा प्रामाणिक बनाना आवश्यक है जिससे यह स्थापित हो कि प्रस्तुत की गई प्रति वास्तव में मूल दस्तावेज़ की सच्ची प्रति है। यह विशेष रूप से बल देने योग्य है कि प्राथमिक साक्ष्य की आवश्यकता के नियम से जो अपवाद बनाए गए हैं, उनका उद्देश्य उन मामलों में राहत प्रदान करना है, जहाँ कोई पक्ष अपनी गलती के बिना वास्तव में मूल दस्तावेज़ प्रस्तुत करने में असमर्थ होता है।"

10. वर्तमान मामले के तथ्यों में, वादी/याचिकाकर्ता द्वारा जिसे प्रदर्श के रूप में चिह्नित करने का प्रयास किया गया है वह दस्तावेज़ अधिनियम की धारा 65 के किसी भी खंड के तहत नहीं आता है। यह दस्तावेज़ न तो ऐसे मूल दस्तावेज़ की फोटोकॉपी है जो नष्ट हो गया हो या खो गया हो। यह मूल दस्तावेज़ "धारा 65 (ङ)" के अर्थों में लोक दस्तावेज़ भी नहीं है। और न ही यह दस्तावेज़ मूल की प्रमाणित प्रति है जिसे "धारा 65 (छ)" के तहत साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया जा सके। यदि द्वितीयक साक्ष्य देने के लिए अधिनियम की धारा 65 के तहत निर्धारित शर्तों में से कोई भी वादी/याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत किए जाने वाले दस्तावेज़ द्वारा पूरा नहीं किया जाता है, तो उसे प्रदर्श के रूप में चिह्नित नहीं किया जा सकता है। वादी/याचिकाकर्ता यह स्थापित करने में विफल रहा है कि अपने सर्वोत्तम प्रयास के बावजूद, वह मूल प्रस्तुत नहीं कर सका जिससे फोटोकॉपी बनाई गई थी। इसके अलावा, उक्त दस्तावेज़, प्रमाणित प्रति की एक फोटोकॉपी है और वादी/याचिकाकर्ता ने अबिलेख पर ऐसा कोई भी दस्तावेज़ प्रस्तुत नहीं किया है जिससे यह प्रदर्शित हो कि अपने सर्वोत्तम प्रयासों के बावजूद वह निबंधन कार्यालय से मूल दस्तावेज़ की प्रमाणित प्रति प्राप्त करने में असमर्थ रहा और इस प्रकार, वह यह दिखाने में विफल रहा है कि वह उस मूल दस्तावेज़ को प्रस्तुत नहीं कर सकता जिससे यह फोटोकॉपी तैयार की गई है। ऐसी स्थिति में, ऐसे दस्तावेज़ को रिकॉर्ड पर लेना संभव नहीं है जो केवल मूल दस्तावेज़ की प्रमाणित प्रति की फोटोकॉपी हो।

11. अतः उपर्युक्त चर्चा के आलोक में, मैं नहीं मानता कि विद्वान विचारण न्यायालय ने अधिकार क्षेत्र में कोई त्रुटि की है। न्यायालय ने वादी/याचिकाकर्ता की वह अर्जी, जिसमें उसने मूल पंजीकृत दस्तावेज़ की प्रमाणित प्रति की छायाप्रती को प्रदर्श के रूप में अंकित करने का अनुरोध किया था, को

विधिसंगत रूप से अस्वीकार किया है। चूँकि प्रश्नगत आदेश में कोई दोष नहीं पाया गया है, अतः उसकी यथावत पुष्टि की जाती है।

12. परिणामस्वरूप, यह याचिका खारिज हो जाती है।

13. हालांकि, याचिकाकर्ता को यह स्वतंत्रता प्राप्त है कि वह मूल *तक्सीमनामा* की प्रमाणित प्रति विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करे। यदि मूल *तकसीमनामा* उपलब्ध नहीं हो पाता है, तो ऐसी स्थिति में विद्वान विचारण न्यायालय उस याचना पर विचार करेगा और उक्त दस्तावेज़ तथा उसके विषयवस्तु की उपस्थिति, प्रामाणिकता और सत्यता का विधि अनुसार मूल्यांकन कर, उसे अभिलेख पर लेने के संबंध में निर्णय करेगा।

(अरुण कुमार झा, न्यायमूर्ति)

वी.के. पांडे/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।